Shodhshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
© 2018 SHISRRJ | Volume 1 | Issue 4 | ISSN : 2581- 6306

गरीबी का परिमाण एवं प्रकृति : आलोचनात्मक विश्लेषण

डॉ.मनमोहन प्रसाद पाण्डेय
भूतपूर्व शोध छात्र,
वाणिज्य एवं व्यवसाय प्रशासन विभाग,
इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद,
उत्तर प्रदेश,भारत।

सारांश– राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण संगठन के यूनीफार्म रिकॉल पीरिएड आँकड़ों के अनुसार राज्यों में गरीबों की सर्वाधिक संख्या (5.90 करोड़) उत्तर प्रदेश में है, जहाँ ग्रामीण क्षेत्रों में 4.73 करोड़ व शहरी क्षेत्रों में 1.17 करोड़ गरीब (2004–05) पाये गये। वहीं दूसरे स्थान में बिहार में 3.69 करोड़ (ग्रामीण क्षेत्रों में 3.37 व शहरी क्षेत्रों मे 0.32 करोड़) गरीब पाये गए हैं। गरीबों की निरपेक्ष संख्या छत्तीसगढ़ में 90.96 लाख, हरियाणा में 32 लाख व पंजाब में 21.63 लाख आकलित किया गया। गरीबों की निरपेक्ष संख्या के मामले में उत्तर प्रदेश का स्थान जहाँ सबसे ऊपर है, वहीं गरीब अनुपात के मामले में (कुल जनसंख्या में निर्धनों की जनसंख्या के मामले में) उड़ीसा का स्थान सर्वोच्च है। उड़ीसा में 46.4 प्रतिशत जनसंख्या गरीबी रेखा से नीचे जीवन यापन कर रही है। बिहार में 41.4 प्रतिशत, छत्तीसगढ़ में 40.9 प्रतिशत, झारखण्ड में 40.3 प्रतिशत व उत्तर प्रदेश में 32.8 प्रतिशत जनसंख्या गरीबी रेखा के नीचे है। गरीबी रेखा के नीचे गरीबी अनुपात वाले राज्यों में असम (19.7 प्रतिशत), केरल (15 प्रतिशत), दिल्ली (14.7 प्रतिशत), हरियाणा (14 प्रतिशत), गोवा (13.8 प्रतिशत), हिमाचल प्रदेश (10 प्रतिशत), पंजाब (8.4 प्रतिशत), व जम्मू कश्मीर (5.4 प्रतिशत), अवरोही क्रम में शामिल हैं। वर्षो से आतंकवाद से जूझ रहे जम्मू–कश्मीर में निर्धनता अनुपात सबसे कम आँकी गयी।

मुख्यशब्द–गरीबी, परिणाम, प्रकृति, जनसंख्या, आतंकवाद, समाज, इतिहास।

मानव इतिहास के प्रारम्भिक काल से ही निर्धनता समाज में विद्यमान रही है। ज्यों–ज्यों समय गुजरता गया वैसे–वैसे जनसंख्या में भी वृद्धि होती गयी और गरीबी बड़े पैमाने में दिखाई देने लगी। निर्धनता पर पहली बार ध्यान तब गया, जब सामाजिक दृष्टि में उसे व्यक्तिगत समस्या से भिन्न रूप में देखा जाने लगा साथ ही इसने निराशावाद को भी जन्म दिया। तत्कालीन जो आर्थिक एवं सामाजिक व्यवस्थाएँ तथा वैज्ञानिक और प्रौद्योगिकी ज्ञान उपलब्ध थे उससे गरीबी की व्यापकता में कमी न हो सकी क्योंकि जनसंख्या में लगातार तीव्र वृद्धि होती गयी। संयोगवश मानव की वैज्ञानिक ज्ञान की सतत् खोज ने इस निराशा को कुछ सीमा तक कम किया। उसने वस्तु और सेवाओं के उत्पादन तेजी से बढ़ाने के लिए प्राकृतिक तथा मानव संसाधनों के इस्तेमाल के नए और क्रान्तिकारी

तरीके खोज निकाले। इस मूलभूत परिवर्तन के कारण ही निर्धनता को सामाजिक बुराई मानकर उसका उन्मूलन करने के लिए सार्थक कार्य करने का सिलसिला आरम्भ हुआ।

भारत के स्वतंत्रता प्राप्ति के समय कई देशों विशेषकर पश्चिमी देशों ने नए और उत्तरोतर विकासशील वैज्ञानिक और तकनीकी ज्ञान का प्रयोग करके अपने सामुदायिक निर्धनता पर काबू पा चुके थे। परन्तु भारत में इस प्रकार का ज्ञान न केवल सीमित ही था बल्कि उसका पूरा प्रयोग भी नहीं किया जा सका, इसलिए देश में निर्धनता एक गम्भीर सामाजिक समस्या बन गयी साथ ही इसके न केवल बने रहने का भय व्याप्त था, बल्कि और अधिक गम्भीर रूप धारण करने का डर था। स्वतंत्र भारत के निर्माताओं ने निर्धनता को सामाजिक समस्या के रूप में देखा जिसके उन्मूलन के लिए संगठित सामाजिक प्रयास जरूरी था। स्वतंत्रता के बाद देश के आर्थिक विकास को बढ़ाने के साथ–साथ गरीबी उन्मूलन को भी मुख्य लक्ष्य के रूप में रखा गया। तथापि गरीबी पर बराबर प्रहार करने के लिए कुछ महत्वपूर्ण बातों की भी आवश्यकता होती है जिसके अन्तर्गत गरीबी का पता लगाने के निश्चित मापदंड और गरीबों का जीवन–स्तर उठाने के लिए ऐसी कार्यनीति जिसमें सुनियोजित कार्यक्रम हों। इसके साथ–साथ सुनियोजित गरीबी उन्मूलन कार्यक्रम आवधिक मूल्यांकन भी किया जाना आवश्यक है। इससे यह स्पष्ट पता चल सकेगा कि जो कार्यक्रम या रणनीति अपनाए गए हैं, वे कितने प्रभावी सिद्ध हुए हैं।

1.2 गरीबी का अर्थ एवं परिभाषा

गरीबी की समस्या एक सामाजिक–आर्थिक समस्या है। किसी भी समाज में व्यक्तियों का बहुत बड़ा भाग जब सभी प्रकार के प्रयत्नों के बावजूद भी जीवन जीने के लिए न्यूनतम आवश्यकताओं को पूरा करने में असमर्थ रहता है तो जनसंख्या के इस भाग को गरीबी के नाम से सम्बोधित किया जाता है। अर्थात् 'यदि किसी समाज में अधिकांश लोगों को रहने के लिए पर्याप्त स्थान, खाने के लिए सामान्य स्तर का पौष्टिक भोजन तथा पहनने के लिए सामान्य कपड़ों का भी अभाव हो तथा वे उन वस्तुओं से वंचित रहते हों, जो उनकी कार्यकुशलता को बनाए रखने के लिए आवश्यक है, तब ऐसे वर्ग को हम गरीब कहते हैं।' इस प्रकार गरीब से आशय समाज के उस भाग से है जो अपने जीवन की बुनियादी आवश्यकताओं यथा रोटी, कपड़ा, छत, शिक्षा तथा स्वास्थ्य आदि को पूरा नहीं कर पा रहे हैं। गरीबी की परिभाषा विभिन्न अर्थशास्त्रियों द्वारा भिन्न–भिन्न मापदण्डों के आधार पर मानकर दी गयी है जिसमें से कुछ प्रमुख परिभाषाएं निम्न हैं–

ब्रेन एवं स्वीजी के अनुसार– '"गरीबी वह अवस्था है जिसमें उस समाज के सदस्य रहते हैं, जिनकी आय समाज तथा उस समय के न्यूनतम जीवन निर्वाह के अनुसार रहने में अपर्याप्त होती है।[1]

वी0के0आर0वी0 राव के अनुसार– गरीबी को कुल सार्वजनिक जीवन–स्तर की न्यूनता के साथ पहचाना जा सकता है, जिसमें केवल ऊर्जा की ही आवश्यकता नहीं होती बल्कि संतुलित भोजन, स्वास्थ्य आवश्यकता और अन्य मूलभूत आवश्यकताएं जो कि मानव जीवन के अस्तित्व के लिए आवश्यक हैं, को सम्मिलित किया जा सकता है।[2]

वीवर के अनुसार– निर्धनता एक ऐसी जीवन–स्तर के रूप में परिभाषित की जा सकती है, जिसमें स्वास्थ्य और शरीर सम्बन्धी दक्षता नहीं बनी रहती है।[3]

योजना आयोग ने गरीबी की परिभाषा ग्रामीण व नगरीय क्षेत्र में व्यक्तियों के भोजन सम्बन्धी आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर दिया है। आयोग के अनुसार, ग्रामीण क्षेत्र में एक व्यक्ति को प्रतिदिन 2400 कैलोरी तथा शहरी क्षेत्र में एक व्यक्ति को प्रतिदिन 2100 कैलोरी ऊर्जा देने वाला भोजन मिलना चाहिए। आहार सम्बन्धी इन आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर 1979–80 की कीमतों पर ग्रामीण क्षेत्रों में 76 रूपये तथा शहरी क्षेत्रों में 88 रूपये पर गरीबी रेखा का निर्धारण किया गया है।[4]

1.3 निर्धनता की संकल्पनाएँ

आम भाषा में गरीब और अमीर दो ऐसे शब्द हैं जिसका एक दूसरे से विपरीत संबन्ध है। गरीब की परिभाषा के साथ–साथ अमीर का अर्थ समझना भी जरूरी है, क्योंकि प्रायः हम गरीब और अमीर की तुलना करते हैं। भारत में गरीबी के बारे में सबसे पहले दादा भाई नौरोजी ने 1871 में प्रकाशित अपनी पुस्तक ''पॉवर्टी एण्ड अन–ब्रिटिश रूल इन इण्डिया'' में विचार किया जिसमें उन्होंने भारत में प्रति व्यक्ति आय का उल्लेख किया है। उन्होंने ये दिखाया है कि ब्रिटेन की तुलना में भारत बहुत निर्धन है। अन्तर्राट्रीय स्तर की तुलना में भारत में यह स्थिति ज्यों की त्यों बनी हुयी है (ब्रिटेन की प्रति व्यक्ति आय 8,870 डालर, अमरीका की 17,480 डालर की तुलना में भारत की प्रति व्यक्ति आय केवल 290 अमेरिकी डालर)। आज भी भारत विश्व के 20 गरीब देशों में है। वस्तुतः इस तरह की तुलना में गरीबी को सापेक्ष दृष्टि से देखते हैं या इसी प्रकार का सापेक्ष दृष्टिकोण किसी देश के व्यक्तियों या समूह की पारस्परिक तुलना के लिए अपनाया जा सकता है। सापेक्ष निर्धनता हमेशा रहेगी क्योंकि कुछ देशों या व्यक्तियों की अन्य समृद्ध देश या व्यक्तियों से तुलना करने पर गरीब हमेशा रहेंगे। इस दृष्टि से यह निर्धनता की अपेक्षा असमानता का सूचकांक अधिक बनता है, जिसकी परिभाषा मनुष्य के व्यक्तित्व के विकास के लिए आवश्यक समझे जाने वाले जीवन निर्वाह के न्यूनतम स्तर के संदर्भ में की जाती है। निर्धनता की इसी आधार पर परिभाषित करने का अर्थ है, हम किसी पूर्व–निर्धारित स्तर या मापदण्ड से उसे तौल रहे हैं। हाल ही के कुछ वर्षों से पूर्ण निर्धनता पर विजय पाने का लक्ष्य सामने रखा गया है।

पूर्ण निर्धनता से अभिप्राय है 'जीवन–यापन का स्तर इतना नीचा है जिसमें मानव व्यक्तित्व–अर्थात् शारीरिक, समाजिक और मानसिक के स्वभाविक विकास में बाधा आती है। पूर्ण निर्धनता की रेखा का अभिप्रायः निर्धनता के उस संकल्पना से है जिससे दो व्यक्तियों/वर्गों के बीच अन्तर किया जा सके जो गरीब है और जो गरीब नहीं है।' सामान्यतः गरीबी रेखा आमदनी के उस स्तर से आँकी जाती है जो किसी व्यक्ति के लिए उपभोग के न्यूनतम स्तर की वस्तुएँ खरीदने के लिए पर्याप्त हो। न्यूनतम आवश्यकता का अर्थ है, उतनी उपभोक्ता वस्तुओं और सेवाओं की उपलब्धि, जो व्यक्ति के सामन्य विकास के लिए पर्याप्त हो। जिन लोगों की आय गरीबी रेखा से नीचे है उन्हें गरीब कहते हैं और सभी गरीबी उन्मूलन कार्यक्रमों में इसी वर्ग की गरीबी को दूर करने का लक्ष्य रखा जाता है।[5]

1.4 निर्धनता के आयाम

यद्यपि गरीबों की पहचान उनकी आमदनी के आधार पर की जाती है परन्तु निर्धनता के कई पहलू या पक्ष हैं। शारीरिक दृष्टि से कुपोषण और रहन–सहन की दृष्टि से अस्वास्थ्यकर इसके मापदण्ड हैं, जिनके कारण बीमारियाँ अधिक होती है और मृत्युदर बढ़ जाती है तथा औसत आयु घट जाती है। इस प्रकार निर्धनता का अर्थ है देश में शारीरिक क्षमता का निम्न स्तर पर होना। मानव शिक्षा के सन्दर्भ में यह शिक्षा और कुशलता के अभाव का द्योतक है जिसके कारण न तो उत्पादन बढ़ पाता है और न ही अधिक मजदूरी के रोज़गार। आर्थिक पहलू पर इसका सम्बन्ध बेरोज़गारी से और सामान्यतः अपूर्ण रोज़गार या कम मजदूरी के अल्प उत्पादकता से है। गरीबों के पास श्रम के संसाधन भी सीमित होते हैं। इसलिए उनका स्वरोज़गार भी अधिक उत्पादक नहीं होता। ऐसे लोगों के सामाजिक और सांस्कृतिक ढाँचे कमजोर होने के कारण इनका शोषण होता है कारण इनकी सामाजिक दृष्टि से उसकी हैसियत निम्न होती है साथ ही इसके साथ भेद–भाव का बर्ताव होता है और सांस्कृतिक क्षेत्र ऐसे लोगो की सामाजिक उपेक्षा होती रहती है।

गरीबों की सही पहचान करना एक महत्वपूर्ण आवश्यकता है। इसके अभाव में बनाई गई सभी रणनीति बेकार सिद्ध हो जाती है। गरीबी उन्मूलन के सभी कार्यक्रमों का लक्ष्य उन लोगों की मदद करना है जो गरीब एवं जरूरतमंद है। भारत में 'गरीबी रेखा' की संकल्पना काफी महत्वपूर्ण हो गयी है क्योंकि इसी के द्वारा सबसे अधिक गरीबों तथा दूसरे के बीच भेद किया जाता है। जब निर्धनतम लोगों का सही पता लग जाए तब उनके उत्थान के लिए निश्चित कार्यक्रम अमल में लाए जा सकते हैं। इससे यह भी सुनिश्चित होता है कि दुर्लभ संसाधन समाज के सभी वर्गों में बराबर थोड़ा–थोड़ा न पहुँचे बल्कि उन्हें दिया जाए जिन्हें इनकी सख्त जरूरत है।

गरीबों का पता लगाने के लिए दूसरी सबसे अधिक अच्छी प्रक्रिया परिवार या व्यक्ति के आय को आधार माना जा सकता है। आय के आधार पर हम यह निर्धारित कर सकते हैं कि कौन गरीब है और कौन गरीब नहीं है। इसी कारण अनेक योजनाकारों ने इस प्रक्रिया को अपनाया है। परन्तु यह बात भी ध्यान में रखनी आवश्यक होगी कि गरीबी की कुछ बातें सामाजिक कारणों से भी प्रभावित होती हैं। निर्धनता कम करने में सरकारी नीति और पैसे की विशेष भूमिका होती है। सस्ती शिक्षा, चिकित्सा सुविधा, शुद्ध पेयजल की उपलब्धता का इसमें अहम स्थान है।[6]

1.5 निर्धनता के मापदण्ड

निर्धनता की माप का सबसे आसान तरीका उन लोगों की गिनती करना है जो गरीबी रेखा से नीचे रह रहे हैं। फिर हम उस संख्या को देश या प्रदेश की कुल जनसंख्या के प्रतिशत् के रूप में दर्शाते हैं। इसको निर्धनता की **व्यक्ति–गणना माप** (हैड काउन्ट मेजर) कहते हैं। यद्यपि यह बहुत सरल और सहज तरीका है परन्तु इसकी मुख्य कमजोरी यह है कि इसमें सभी गरीबों को समान माना जाता है और गरीबी रेखा से उनकी दूरी नहीं देखी जाती है। इसमें प्रति व्यक्ति माप में कम गरीब और अत्यधिक गरीब दोनों को बराबर माना जाता है। इससे यह पता नहीं चल पाता कि एक गरीब व्यक्ति निर्धनता की रेखा से कितनी दूरी पर है। अमर्त्य सेन ने एक नए माप का सुझाव

दिया है जिसे निर्धनता का सेन माप (सेन मेजर) कहा जाता है। इसमें व्यक्ति गणना माप में जो कमी है, वह दूर हो गयी है। इसमें न केवल गरीबों की संख्या ली जाती है, बल्कि गरीबी की समस्या को भी देखा जाता है। गरीबी की समस्या निर्धनता अंतर के रूप में व्यक्त की जाती है। इसी आधार पर सूचकांक तैयार किया जाता है इस प्रकार से इसका अर्थ है जितना सूचकांक अधिक होगा, निर्धनता भी उतनी ही गहन होगी।[7]

1.6 ग्रामीण निर्धनता के निर्धारक–तत्व

रोज़गार आमदनी का साधन है। रोज़गार कम हो तो गरीबी बढ़ेगी अर्थात गरीबी के लिए रोज़गार के पर्याप्त अवसरों का होना बुनियादी आवश्यक है। भारत में जनसंख्या बढ़ती जा रही है और उसकी तुलना में प्रकृतिक संसाधन लगातार कम होते जा रहे है। आज प्रति ग्रामीण परिवार औसतन एक हैक्टेयर से कुछ अधिक खेती योग्य है। उर्वरकों और अधिक उपज देने वाले बीजों के इस्तेमाल के लिए सिंचाई जरूरी है। परन्तु यहाँ पानी का वितरण समान नहीं है ऐसी स्थिति में जमीन के समान वितरण से कुछ अल्पकालिक लाभ मिल सकते हैं।

इस प्रकार देखा जाय तो गरीबी के कई कारण हैं उदाहरण के तौर पर जनसंख्या के आवश्यकताओं के अनुसार प्राकृतिक और कृत्रिम संसाधनों की कमी और उनका असमान वितरण एक महत्वपूर्ण बुनियादी कारण है। ग्रामीण इलाकों में जहाँ जनसंख्या अधिक होती है वहां गरीब भी अधिक होते हैं कारण गरीबी का संबन्ध आर्थिक गतिविधियों उपलब्ध एवं संसाधनों से होता है। अतः ग्रामीण इलाकों में निर्धनता कम करने के लिए वहाँ अधिक कृत्रिम संसाधनों के सृजन एवं इस्तेमाल की आवश्यकता है। इस संसाधनों के सही उपयोग के लिए वहाँ आधुनिक टैक्नोलॉजी का इस्तेमाल करने की जरूरत है। इन संसाधनों का इतनी कुशलता से उपयोग होना चाहिए कि इनका लाभ अपेक्षाकृत अधिक गरीब लोगों को मिले। इससे स्वरोज़गार अधिक उत्पादक होगा तथा भूमिहीन मजदूरों को अधिक रोज़गार मिलेगा और उनकी आमदनी बढ़ेगी।[8]

1.7 गरीबी रेखा का निर्धारण

भारत में गरीबी रेखा के निर्धारण में कई उपायों को अपनाया गया है जिसमें पहला उपाय एक आदमी के लिए न्यूनतम आवश्यकताओं का निर्धारण है। न्यूनतम आवश्यकताओं को दो समूहों में अर्थात् खाद्य और गैर–खाद्य श्रेणियों में बाँटा गया है। खाद्य सम्बन्धी न्यूनतम आवश्यकता पोषाहार को ध्यान में रखकर निर्धारित की गयी है जिसमें मानव शरीर को कार्बोहाइड्रेट, वसा, प्रोटीन, विटामिन तथा खनिज जैसे पोषक तत्वों की आवश्यकता है, इसका अनुमान भारतीय चिकित्सा अनुसंधान परिषद् जैसी संस्थाओं ने लगाया है। खाने की जिन वस्तुओं से एक व्यक्ति की आवश्यक पोषण तत्वों की पूर्ति होती है वह एक व्यक्ति की खाद्य सम्बन्धी न्यूनतम आवश्यक है। भारत में गरीबी रेखा की रचना केवल खाद्य वस्तुओं की खपत के आधार पर की जाती है। तथा अन्य आयामों को छोड़ दिया जाता है। इस प्रकार स्पष्ट है कि हमारे समाज में गरीबी की रेखा निश्चित करने के लिए ये काफी नहीं है। परन्तु यह भी ध्यान में रखना चाहिये कि भारत जैसे विशाल देश में यह सूत्र व्यावहारिकता के काफी निकट है क्योंकि हम अपने आय का बड़ा हिस्सा खाने पीने पर खर्च करते हैं। दूसरा उपाय मौजूदा बाजार भावों पर न्यूनतम खाद्य वस्तुओं की

आवश्यकताओं की लागत का हिसाब के आधार पर किया जाता है। इसमें वे भाग लिए जाते हैं जो उपभोक्ता को चुकाने पड़ते हैं ताकि हिसाब में लायी गई लागत उतनी हो, जितना पैसा खाद्य वस्तुओं को खरीदने में खर्च होता है। तीसरे उपाय के अन्तर्गत प्रति व्यक्ति आय स्तर का हिसाब लगाया जाता है, यह आय दूसरे उपाय में जिस लागत का हिसाब लगाया गया है उसके बराबर होती है। यह आय स्तर ही गरीबी रेखा है और यह सामान्यतः ''प्रति व्यक्ति प्रति मास'' के आधार पर अभिव्यक्त की जाती है। तीसरे उपाय की गणना करने के लिए विभिन्न आय वर्ग के लोगों के उपभोक्ता खर्च का ब्यौरा होना जरूरी है।

इस प्रकार से स्पष्ट होता है कि गरीबी रेखा का निर्धारण खाद्य वस्तुओं के लिए आवश्यक पैसे के आधार पर किया जाता है। उपभोग की अन्य आवश्यकताओं की मात्रा के आधार पर गरीबी रेखा का निर्धारण नहीं किया जाता है। बल्कि खाद्य वस्तुओं से भिन्न इन उपभोक्ता वस्तुओं पर वर्तमान उपभोक्ता खर्च को न्यूनतम आवश्यकता माना जाता है। इस प्रकार स्पष्ट है कि यह एक अनुमान है, इसे मापदण्ड नहीं माना जा सकता। खाद्य से भिन्न वस्तुओं का वस्तुवार न्यूनतम स्तर निर्धारित करना एक कठिन कार्य है।

गरीबी रेखा के निर्धारण में यह बात भी ध्यान में रखनी चाहिए कि पोषक तत्वों की आवश्यकता आमतौर पर कैलोरियों की खपत के बराबर मानी जाती है। योजना आयोग इस कार्यविधि को ही अपनाता है और गरीबी रेखा की परिभाषा प्रति व्यक्ति मासिक आय के उस स्तर के रूप में करता है जो एक व्यक्ति की कैलोरियों की न्यूनतम आवश्यकता की पूर्ति के लिए पर्याप्त होती है। कुछ विशेषज्ञों का मत है कि जब औसत भारतीय के खाने में पर्याप्त कैलोरियाँ होती हैं तो इसमें आमतौर पर प्रोटीन जैसे अन्य पोषक तत्व भी काफी मात्रा में होते हैं। अगर हम इस बात को ध्यान में रखें तो कैलोरियों के आधार पर गरीबी रेखा निर्धारित करने में योजना आयोग के तरीके अधिक उपयुक्त हैं। **प्रो0 अमर्त्य सेन** का मत है कि गरीबी मूलभूत आवश्यकताओं के वंचन का परिणाम है। भारत में इण्डियन काउन्सिल ऑफ मेडिकल रिसर्च (ICMR) के एक्सपर्ट ग्रुप ने एक स्वस्थ व्यक्ति के लिए शहरी क्षेत्र में 2100 कैलोरी तथा ग्रामीण क्षेत्र के लिए 2400 कैलोरी ऊर्जा की आवश्यकता का मानक तय किया। इसी मानक के आधार पर विभिन्न अर्थशास्त्रियों ने गरीबी का अनुमान लगाने का कार्य किया तथा राष्ट्रीय प्रतिदर्श सर्वेक्षण संगठन (NSSO) के उपभोक्ता व्यय के आंकड़ों को आधार बनाते हुए गरीबी रेखा को परिभाषित किया। राष्ट्रीय प्रतिदर्श सर्वेक्षण संगठन (NSSO) प्रत्येक पॉच वर्ष में राष्ट्रव्यापी सर्वेक्षण के आंकड़े प्रकाशित करता है जबकि इसके अध्ययन की विधि एवं प्रतिदर्श के आकार में निरन्तर परिवर्तन होते रहे हैं। किन्तु अर्थशास्त्रियों ने इसे तुलनीय बनाने हेतु कामन डिनोमिनेटर एवं थ्रेस होल्ड व्ययों का सहारा लेकर विभिन्न राउण्ड के सर्वेक्षण के आधार पर गरीबी रेखा एवं गरीबों की संख्या के निर्धारण का प्रयास करते हैं।

दूसरी ओर वर्ष 1997 में सरकार द्वारा किये गये परिवारों के चिन्हीकरण के अन्तर्गत वे गरीब परिवार, जिनकी वार्षिक आय 9,000 रूपये थी, वे गरीबी रेखा के नीचे माने जाते थे। लेकिन जुलाई 2004 में सरकार द्वारा परिवारों के चिन्हीकरण के अन्तर्गत पॉच सदस्यों के परिवार को आधार मानते हुए देश के ग्रामीण क्षेत्रों में जिन परिवारों की वार्षिक आय 19,884 रूपये तथा शहरी क्षेत्रों में 25,546 रूपये प्रति परिवार प्रतिवर्ष है, को गरीबी रेखा से

नीचे जीवन–यापन करने वाले (बी0पी0एल0) परिवारों की श्रेणी में रखा गया है। उक्त आय से अधिक वार्षिक आय वाले परिवार ए0पी0एल0 योजना में राशन कार्ड प्राप्त करने की पात्रता रखते हैं।[9]

1.11 भारत में गरीबों की संख्या : एक अनुमान

1.11.1 गरीबी पर विभिन्न अर्थशास्त्रियों व संस्थाओं के अनुमान

गरीबी के मापने का मुख्य मापदण्ड, गरीबी रेखा है। गरीबी का अनुमान अर्थशास्त्रियों व शोध संस्थाओं द्वारा समय–समय पर लगाये जाते रहे हैं, इनमें से प्रमुख अर्थशास्त्रियों व संस्थाओं के अनुमान निम्न हैं–

अर्थशास्त्री व शोध संस्थाएं	कीमत सूचकांक वर्ष	आधार	गरीबी रेखा		गरीबी रेखा के नीचे जनसंख्या (प्रतिशत में)	
			ग्रामीण क्षेत्र	शहरी क्षेत्र	ग्रामीण क्षेत्र	शहरी क्षेत्र
दाण्डेकर एवं रथ	1960–61	2250 कैलोरी ऊष्मा	प्रतिदिन प्रति व्यक्ति वार्षिक उपभोग व्यय को आधार मान कर 180 रूपये गरीबी रेखा का निर्धारण किया।	प्रतिदिन प्रति व्यक्ति वार्षिक उपभोग व्यय को आधार मान कर 270 रूपये गरीबी रेखा का निर्धारण किया।	33	49
	1968–69	2250 कैलोरी ऊष्मा	वार्षिक उपभोग व्यय को आधार मान कर प्रति व्यक्ति 324 रूपये गरीबी रेखा का निर्धारण किया।	वार्षिक उपभोग व्यय को आधार मान कर प्रति व्यक्ति 270 रूपये गरीबी रेखा का निर्धारण किया।	40	50
पी0डी0 ओझा	1960–61	2250 औसत कैलोरी ऊष्मा	1800 कैलोरी ऊष्मा प्राप्त करने के लिये दैनिक उपभोग के आधार पर 198 रूपये वार्षिक गरीबी रेखा का निर्धारण किया।	दैनिक उपभोग व्यय आधार पर 1500 कैलोरी ऊष्मा प्राप्त करने के लिये 240 रूपये वार्षिक की गरीबी रेखा निर्धारण किया।	51.82	7.64
पी0के0 वर्धन	1960–61		की कीमतों पर मासिक उपभोग व्यय को आधार मानकर 150 रूपये की गरीबी रेखा का निर्धारण किया।		38	–

	1967–68		दैनिक उपभोग व्यय के आधार पर 150 रूपये की गरीबी रेखा का निर्धारण किया		54	–

अर्थशास्त्री व शोध संस्थाएं	कीमत सूचकांक वर्ष	आधार	गरीबी रेखा		गरीबी रेखा के नीचे जनसंख्या (प्रतिशत में)	
			ग्रामीण क्षेत्र	शहरी क्षेत्र	ग्रामीण क्षेत्र	शहरी क्षेत्र
योजना आयोग	1979–80	ग्रामीण क्षेत्र के लिये 2400 कैलोरी ऊष्मा व शहरी क्षेत्र के लिये 2100 कैलोरी ऊष्मा	के दैनिक उपभोग को न्यूनतम मानकर ग्रामीण जनता के लिये 77 रूपये की गरीबी रेखा का निर्धारण किया।	जबकि शहरी जनता के लिये 88 रूपये प्रति व्यक्ति प्रतिमास की गरीबी रेखा का निर्धारण किया।	50.7	40
	1996–97	उपरोक्त आधार पर	दैनिक उपभोग को न्यूनतम मानकर 77 रूपये प्रति व्यक्ति प्रतिमास की गरीबी रेखा का निर्धारण किया।	जबकि शहरी जनता के लिये 88 रूपये प्रति व्यक्ति प्रतिमास की गरीबी रेखा का निर्धारण किया।	30.6	25.6
	1999–2000	उपरोक्त आधार पर	दैनिक उपभोग के न्यूनतम मानकर 77 रूपये प्रति व्यक्ति प्रति मास की गरीबी रेखा का निर्धारण किया।	88 रूपये प्रति व्यक्ति प्रतिमास की गरीबी रेखा का निर्धारण किया।	27.1	23.6
	2004–05	उपरोक्त	उपरोक्त आधार	उपरोक्त आधार	28.3	25.7

		आधार पर				
विश्व बैंक के अनुमान	1973–74		ग्रामीण जनता के लिये प्रति व्यक्ति प्रतिमास 49.1 रूपये की गरीबी रेखा का निर्धारण किया।	जबकि शहरी क्षेत्र की जनता के लिये 56.6 रूपये प्रति व्यक्ति प्रतिमास की गरीबी रेखा का निर्धारण किया।	55.36	45.67

स्रोतः– बी0 ओजलर, जी0 दत्त एण्ड एम0 र्वेलियन, ए0 डेटाबेश ऑन पॉवर्टी एण्ड ग्रोथ इन इण्डिया, पृष्ठ 102।

सारणी 1.2: भारत में गरीबी की उपनति (गरीबों की संख्या व प्रतिशत)

वर्ष	गरीबों की संख्या (करोड़ में)	कुल जनसंख्या में गरीबों का प्रतिशत
1960-61	17	34
1964-65	22	46
1970-71	25	45
1973-74	32	46
1979-80	33	48
1986-87	27	34
1987-88	31	39.3
1993-94	32	36
1996-97	27	29.18
1999-2000	26	26
2004-05	23	21.8
2007-08	22	19.3

स्रोत :– आर्थिक सर्वेक्षण, 2007–08, स्टैटिकल आउट लाइन ऑफ इण्डिया।

उपरोक्त सारणी में दिये गये आंकड़े स्पष्ट करते हैं कि वर्ष 1960–61 में देश में 17 करोड़ लोग (अर्थात् कुल जनसंख्या का 34 प्रतिशत) गरीबी रेखा के नीचे जीवन–यापन कर रहे थे। वर्ष 1970–71 में यह संख्या बढ़कर 25 करोड़ हो गयी जो कुल जनसंख्या का 45 प्रतिशत थी। इसी प्रकार वर्ष 1979–80 में देश में 33 करोड़ लोग

(अर्थात कुल जनसंख्या का 48 प्रतिशत) गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन करते हुए पाए गये। यद्यपि वर्ष 1993–94 में 32 करोड़ लोग (अर्थात कुल जनसंख्या का 36 प्रतिशत) गरीबी रेखा से नीचे थे जो कि वर्ष 1979–80 की तुलना में एक करोड़ कम थी। योजना आयोग, भारत सरकार के अनुसार वर्ष 1999–2000 में 26 करोड़ लोग अर्थात् (अर्थात जनसंख्या का 26 प्रतिशत) गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन करने को अभिशप्त थे तथा यह संख्या वर्ष 2007–08 के अनुमान के अनुसार लगभग 22 करोड़ पायी गयी (अर्थात कुल जनसंख्या का 19.3 प्रतिशत)।

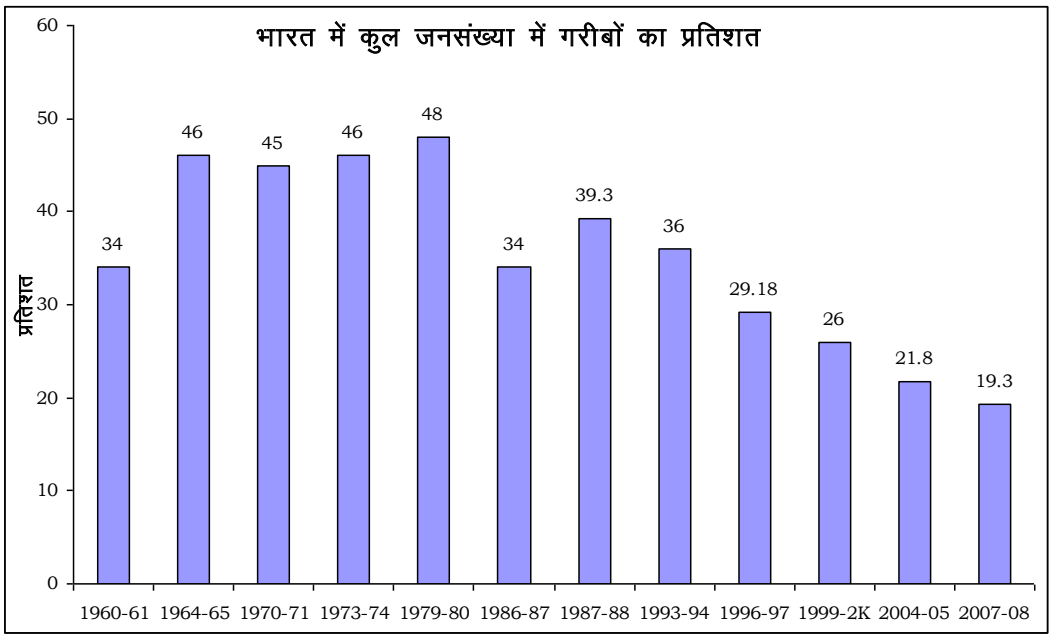

सारणी 1.3: ग्रामीण व शहरी गरीबी की स्थिति

वर्ष	गरीबी रेखा के नीचे जनसंख्या का प्रतिशत		
	ग्रामीण	शहरी	योग
1972-73	54.0	42.0	51.0
1987-88	39.1	38.2	38.9
1993-94	37.3	32.4	36.0
1999-2000	27.09	23.6	26.1
2004-05	21.8	21.7	21.8
2007-08	21.1	15.1	19.3

स्रोत :– आर्थिक सर्वेक्षण, 2007–08, स्टैटिकल आउट लाइन ऑफ इण्डिया।

उपरोक्त सारणी में दिये गये आंकड़े स्पष्ट करते हैं कि ग्रामीण व शहरी दोनों क्षेत्रों में गरीबी लगातार घट रही है। वर्ष 1972–73 में ग्रामीण व शहरी दोनो क्षेत्रों में क्रमशः 54 प्रतिशत व 42 प्रतिशत लोग गरीबी रेखा के नीचे जीवन–यापन कर रहे थे जो वर्ष 1993 –94 में घटकर क्रमशः 37.3 प्रतिशत व 32.4 प्रतिशत हो गयी। जबकि वर्ष 2004–05 में कुल 21.8 प्रतिशत ग्रामीण जनसंख्या गरीबी रेखा के नीचे तथा 21.7 प्रतिशत शहरी क्षेत्र में गरीब थे जो वर्ष 2007–08 में घटकर क्रमशः 21.1 प्रतिशत व 15.1 प्रतिशत हो गये। इस प्रकार उपरोक्त आंकड़ों के अध्ययन से स्पष्ट होता है कि शहरी गरीबी अनुपात की तुलना में देश के ग्रामीण क्षेत्रों में गरीबी का अनुपात अधिक है। संक्षेप में शहरी क्षेत्र में गरीबी अनुपात जो वर्ष 1972–73 में 42 प्रतिशत था वह घटकर वर्ष 2007–08 में 15.1 प्रतिशत हो गयी अर्थात 32.9 प्रतिशत की कमी आयी।

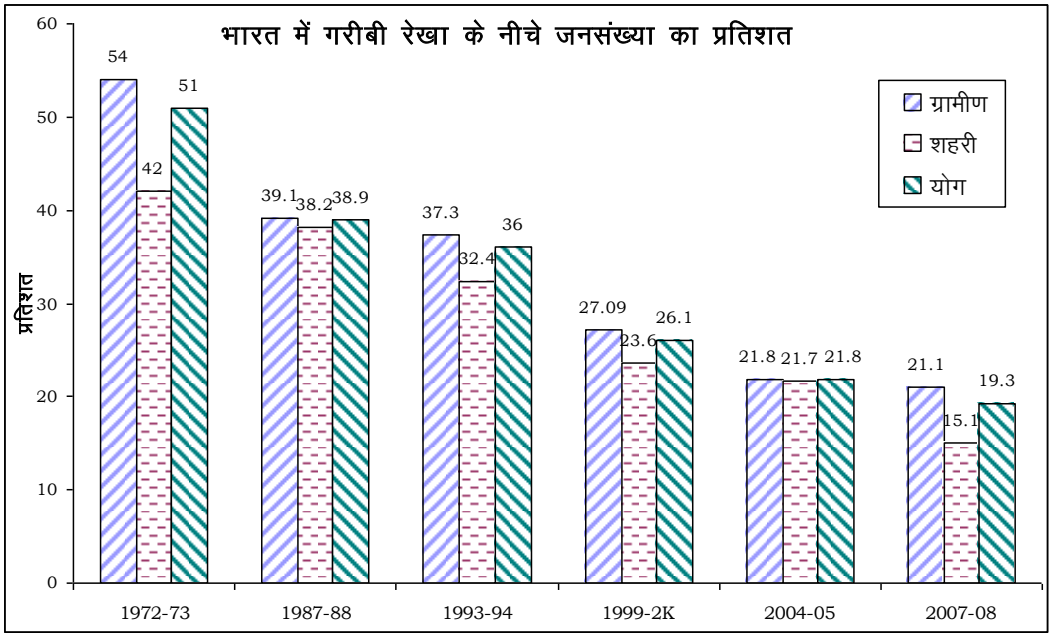

1.12 भारत में गरीबी : वर्तमान स्थिति

सारणी 1.4: भारत में ग्रामीण एवं शहरी क्षेत्र में वास्तविक गरीबों की संख्या और गरीबी अनुपात

वर्ष	वास्तविक गरीबों की संख्या (लाख में)			गरीबी अनुपात (प्रतिशत)		
	ग्रामीण	शहरी	मिश्रित	ग्रामीण	शहरी	मिश्रित

1972-973	261.3	60.3	321.3	56.44	49.01	54.88
1977-1978	264.2	64.6	328.9	53.07	45.24	51.32
1983-1984	252.0	70.9	322.9	45.65	40.79	44.48
1987-1988	231.9	75.2	307.0	39.09	38.20	38.86
1993-1994	244.0	76.3	320.4	37.27	32.36	35.97
1999-2000	193.2	67.0	260.3	27.09	23.62	26.10

स्रोत :– योजना आयोग, भारत सरकार, 2002।

उपरोक्त आंकड़ो के अध्ययन से यह पता चलता है कि देश में ग्रामीण गरीबी अनुपात जो वर्ष 1972–73 में 56.44 प्रतिशत थी, वर्ष 1983–84 में घटकर 45.65 प्रतिशत हो गयी। जबकि वर्ष 1987–88 में ग्रामीण गरीबी अनुपात 39.09 प्रतिशत थी, जो वर्ष 1999–2000 में घटकर 27.09 प्रतिशत हो गयी। जबकि इसी अवधि में शहरी गरीबी अनुपात में अपेक्षाकृत कम कमी हुयी और यह वर्ष 1972–73 के 49.2 प्रतिशत से घटकर 1983–84 में 40.79 प्रतिशत हो गयी। वर्ष 1987–88 में शहरी गरीबी अनुपात 38.2 प्रतिशत थी जो वर्ष 1999–2000 में घटकर 23.62 प्रतिशत हो गयी। इसका आशय यह है कि देश में पिछले 27 वर्षों की अवधि में गरीबी अनुपात में 28.78 प्रतिशत की कमी आयी अर्थात् गरीबों की जनसंख्या 1.06 प्रतिशत वार्षिक दर से कमी हुई।

दूसरी ओर इन आंकड़ों का अध्ययन स्पष्ट करता है कि शहरी क्षेत्र में गरीबी अनुपात तुलनात्मक रूप से ग्रामीण गरीबी अनुपात से ऊंचा था। शहरों में गरीबों की संख्या जहॉ वर्ष 1972–73 में 603 लाख थी, वहीं वर्ष 1977–78 में 646 लाख व वर्ष 1987–88 में 752 लाख हो गई जो वर्ष 1993–94 में और बढ़कर 763 लाख तक पहुँच गई। इसके पश्चात् वर्ष 1999–2002 में देश के शहरी गरीबों की संख्या घटकर 670 लाख हो गयी अर्थात इसमें 93 लाख की कमी दर्ज की गयी। जबकि ग्रामीण क्षेत्रों में गरीबों की संख्या जो वर्ष 1972–73 में 2613 लाख थी, वह वर्ष 1977–78 में बढ़कर 2642 लाख हो गयी अर्थात् 29 लाख की बढ़ोत्तरी दर्ज की गयी लेकिन इसके बाद के वर्षों में गरीबों की संख्या में उत्तरोत्तर कमी दर्ज की गयी और यह वर्ष 1999–2002 में घटकर 1932 लाख रह गयी।

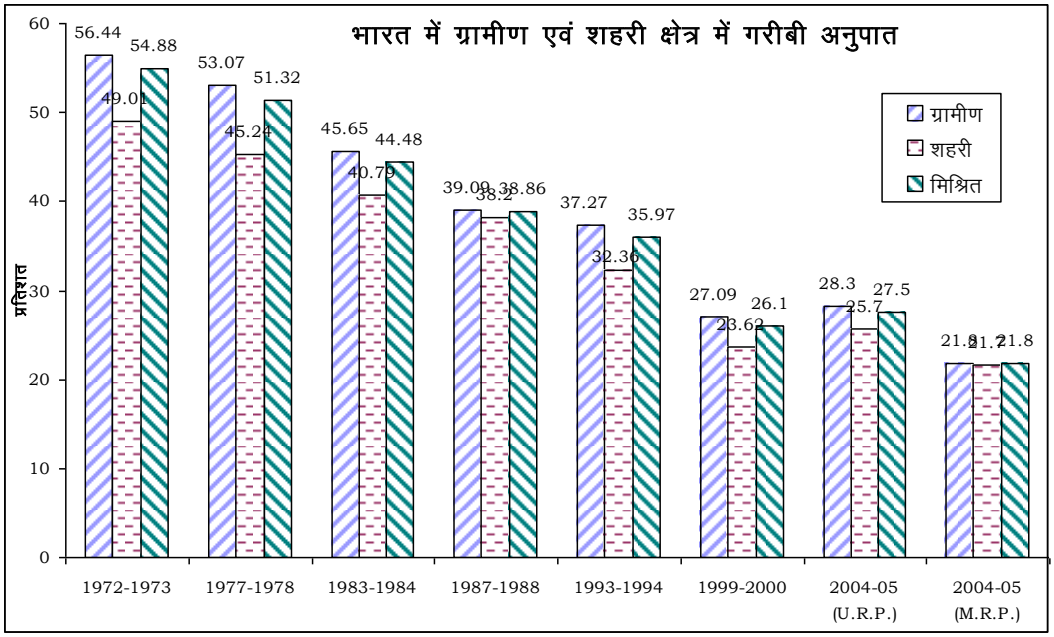

देश में गरीबी का अनुमान लगाने के लिए योजना आयोग ने ताजा आँकड़े वर्ष 2007 में प्रकाशित किया। राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण संगठन ने गरीबी की स्थिति का अनुमान लगाने के लिये वर्ष 2004–05 के अपने सर्वेक्षण में दो प्रकार के प्रश्नों का प्रयोग किया है। इसमें एक 30 दिन के यूनीफार्म रिकॉल पीरिएड उपभोग व्यय पर व दूसरा 365 दिन के सन्दर्भ वाले मिक्स्ड रिकॉल पीरिएड पर आधारित था, इन दोनों के आधार पर गरीबी अनुपात का अलग–अलग अनुमान लगाया गया है जिसे निम्न तालिका द्वारा प्रदर्शित किया गया है।

सारणी 1.5: भारत में गरीबों की संख्या और गरीबी अनुपात एम0आर0पी0 पर आधारित आँकड़े

वर्ष	लाखों में			कुल जनसंख्या का प्रतिशत		
	अखिल भारत	ग्रामीण	शहरी	अखिल भारत	ग्रामीण	शहरी
1999–2000	26.02	19.32	6.7	26.1	27.1	23.6
2004–2005	23.85	17.03	6.82	21.8	21.8	21.7
यू0आर0पी0 पर आधारित आंकड़े						
1993–1994	32.03	24.40	7.63	36.0	37.3	32.4
2004–2005	30.17	22.09	8.08	27.5	28.3	25.7

स्रोतः– www.planningcommission.nic.in

उपरोक्त आँकड़ों से स्पष्ट होता है कि वर्ष 1999–2000 से वर्ष 2004–05 की अवधि में देश में गरीबी रेखा के नीचे की जनसंख्या 26.2 करोड़ से घटकर 23.85 करोड़ हो गयी है। इसी अवधि में ग्रामीण क्षेत्रों में गरीबों की

संख्या जहाँ 19.32 करोड़ से घटकर 17.03 करोड़ हो गयी है, वहीं शहरी क्षेत्रों में गरीबी 6.7 करोड़ से बढ़कर 6.82 करोड़ हो गयी है। इस प्रकार इस अवधि में गरीबी अनुपात 26.10 प्रतिशत से घटकर 21.8 प्रतिशत हो गया है। इसका अर्थ है कि वर्ष 1999–2000 में देश के जहाँ 26.10 प्रतिशत लोग गरीबी रेखा से नीचे जीवन–यापन कर रहे थे, वहीं वर्ष 2004–05 में इनकी संख्या घटकर 21.8 प्रतिशत हो गयी साथ ही शहरी क्षेत्रों में यह 23.6 प्रतिशत से घटकर 21.7 प्रतिशत हो गयी है।

योजना आयोग द्वारा राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण संगठन के तहत जारी रिपोर्ट के यूनीफार्म रिकाल पीरिएड उपभोग आधारित गरीबी के आँकड़े वर्ष 1993–94 के आँकड़ों के साथ तुलनीय हैं। इन आँकड़ों के अनुसार वर्ष 1993–94 में देश में गरीबों की संख्या 32.03 करोड़ थी, जिसमें 24.40 करोड़ निर्धन ग्रामीण क्षेत्रों में तथा शेष 7.63 करोड़ शहरी क्षेत्रों में थे। यह संरचना मामूली घटकर 2004–05 में ग्रामीण क्षेत्रों में गरीबों की संख्या 22.09 करोड़ व शहरी क्षेत्रों में यह 8.08 करोड़ बताई गयी है। यूनीफार्म रिकॉल पीरिएड के आँकड़ों के अनुसार कुल जनसंख्या के प्रतिशत के रूप में गरीबी रेखा से नीचे जीवन यापन करने वाली जनसंख्या का अनुपात वर्ष 1993–94 में 36.0 प्रतिशत था जो वर्ष 2004–05 मे ं27.5 प्रतिशत हो गया। वर्ष 1993–94 में ग्रामीण क्षेत्रों में 37.3 प्रतिशत जनसंख्या गरीबी रेखा से नीचे जीवन यापन कर रही थी, जबकि वर्ष 2004–05 में यह अनुपात क्रमशः 28.3 प्रतिशत व 25.7 प्रतिशत रही है।

सन्दर्भ–

1– नगरीय गरीबी की प्रकृति, एच0एन0 कोठारी, विकास पब्लिकेशन, जयपुर, 1993, पृष्ठ–8।

2– नगरीय गरीबी की प्रकृति, एच0एन0 कोठारी, विकास पब्लिकेशन, जयपुर,, 1993, पृष्ठ–58।

3– समाजशास्त्र के सिद्धान्त, डी0आर0 सचदेव. किताब महल, इलाहाबाद, 1993, पृष्ठ–796।

4– भारतीय अर्थव्यवस्था, एस0के0 मिश्र एण्ड वी0के0 पुरी, हिमालया पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, 2009, पृष्ठ–197।

5– ग्रामीण सामाजिक–आर्थिक संरचना, प्रो0 प्रभा चावला, नई दिल्ली, 1991, पृष्ठ–82।

6– ग्रामीण सामाजिक–आर्थिक संरचना, प्रो0 प्रभा चावला, नई दिल्ली, 1991, पृष्ठ–82–83।

7– ग्रामीण सामाजिक–आर्थिक संरचना, प्रो0 प्रभा चावला, नई दिल्ली, 1991, पृष्ठ–84।

8– ग्रामीण सामाजिक–आर्थिक संरचना, प्रो0 प्रभा चावला, नई दिल्ली, 1991, पृष्ठ–90–91।

9– बी0पी0एल0 सर्वे 2004, ग्रामीण विकास मंत्रालय, भारत सरकार।

10– पावर्टी एण्ड अनब्रिटिश रूल्स इण्डिया, दादा भाई नैरोजी, 1901, लन्दन, पृष्ठ–1।

11– भारत का आर्थिक इतिहास (1600–1800), आर0के0 मुखर्जी, लन्दन, 1948, पृष्ठ–54।

12– भारत में उपनिवेशवाद और राष्ट्रवाद, डा0 सत्या राय, दिल्ली विश्वविद्यालय, 1962, पृष्ठ–2।

13– मानव विकास प्रतिवेदन, 2006, राज्य नियोजन विभाग, उत्तर प्रदेश सरकार, लखनऊ, पृष्ठ–1–2।

14– मानव विकास प्रतिवेदन, 2006, राज्य नियोजन विभाग, उत्तर प्रदेश सरकार, लखनऊ, पृष्ठ संख्या–68–69।